कृष्ण का योग दर्शन

डा० शिखा वर्मा
बी० एड्० विभाग
का० सु० साकेत स्नातकोत्तर महाविद्यालय, अयोध्या, फैज़ाबाद

सारांश

भगवद्गीता में श्री कृष्ण द्वारा अर्जुन को दिये गए उपदेश की उत्पत्ति का मूल आधार अभिप्रेरणा है, कृष्ण अर्जुन को लड़ने की प्रेरणा देते रहे क्यों कि अर्जुन एक योद्धा थे तथा युद्ध करना उनका कर्त्तव्य था। कृष्ण अभ्यास तथा वैराग्य पर बल देते हैं, निद्रा में अधिक स्वप्न देखने वाला समुचित योग नहीं कर सकता, प्रति दिन छः घंटे से अधिक नहीं सोना चाहिए । उन्होंने चार न्यूनतम निषेध बताये हैं- 1. अवैध स्त्री संग नहीं, 2. नशा नहीं, 3. मांस भक्षण नहीं तथा 4. जुआ नहीं। मन तथा शरीर को वश में करना सरल नहीं है किन्तु हम ईश्वर में रत रहें तो इन सारे नियमों का अनुसरण सरलता से हो सकता है। यदि हम योग पद्धति में सफलता की आशा करते हैं तो हमें अपनी अनियंत्रित इन्द्रियों द्वारा स्वयं को गिरने से रोकना होगा, भगवद्गीता मनोवैज्ञानिक रूप से हमें अपना कर्म करने के लिए प्रेरित करती है और कर्त्तव्य तथा अकर्तव्य में अंतर बता कर हमारा मार्गदर्शन करती है जिस प्रकार कृष्ण नें अपने योग दर्शन का प्रयोग कर के अर्जुन को कर्म पथ पर अग्रसर किया उसी प्रकार वर्तमान में भी व्यक्ति संयमित जीवन जीते हुए अपने शरीर तथा मन पर नियंत्रण रख कर दृढ़ संकल्प कर के अपने कर्तव्यों एवं उत्तरदायित्वों का समुचित रूप से निर्वहन कर सकता है।

पाश्चात्य देशों में मुख्य रूप से इस शताब्दी में अनेक प्रकार की योग पद्धतियों का प्रचलन हुआ है लेकिन वास्तव में उनमें से किसी ने भी योग की पूर्णता नहीं सिखाई है। भगवद्गीता में श्री कृष्ण अर्जुन को सीधे ही उपदेश देते हैं, श्री कृष्ण द्वारा दिये गए उपदेश की उत्पत्ति का मूल आधार अभिप्रेरणा है क्योंकि कुरुक्षेत्र में अर्जुन द्वारा युद्ध का विचार त्याग दिया गया जिसका अर्थ था धर्म की पराजय और अधर्म की जीत किन्तु चूंकि भगवान् श्री कृष्ण ने धर्म को विजय दिलाने का बीड़ा उठाया था, इसके लिए उन्हें अर्जुन को युद्ध के लिए तैयार करना था, भगवद्गीता में स्थान-स्थान पर कृष्ण अर्जुन को लड़ने की प्रेरणा देते रहे क्यों कि अर्जुन एक योद्धा थे तथा युद्ध करना उनका कर्त्तव्य था। कृष्ण छठे अध्याय में ध्यान योग पद्धति का वर्णन करते हैं, "हे महाबाहु कुंती पुत्र ! निःसंदेह चंचल मन को वश में करना अत्यंत कठिन है, किन्तु उपयुक्त अभ्यास द्वारा तथा विरक्ति द्वारा ऐसा संभव है।"

यहाँ कृष्ण अभ्यास तथा वैराग्य पर बल देते हैं किन्तु वह वैराग्य क्या है? आज हमारे लिए किसी भी वस्तु का त्याग लगभग असंभव ही है, क्यों कि हम नाना प्रकार के भौतिक सुखों के आदी हो चुके हैं असंयत जीवन जीते हुए भी हम योग की कक्षाओं में जाते हैं तथा सफलता की आशा करते हैं। आपने प्रवचन में कृष्ण घोषणा करते हैं कि अधिक खाने वाले अथवा कम खाने वाले द्वारा योग नहीं किया जा सकता। स्वयं को भूखा रखने वाला ठीक

प्रकार से योग नहीं कर सकता । खाने की विधि संतुलित होनी चाहिए जब स्वादिष्ट व्यंजन हमारे समक्ष आते हैं तो हम एक नही बल्कि दो, तीन, चार तथा और भी अधिक व्यंजन खा लेते हैं हमें कभी भी संतुष्टि नहीं मिलती किन्तु भारत में किसी योगी को हम दिन में मात्र एक बार अल्प मात्र में आहार लेते हुए देख सकते हैं । ध्यान योग तब भी नहीं किया जा सकता है जब व्यक्ति बहुत अधिक सोता हो अथवा अपर्याप्त सोता हो । गीता में कृष्ण चेतावनी देते हैं कि निद्रा में अधिक स्वप्न देखने वाला समुचित योग नहीं कर सकता । व्यक्ति को प्रति दिन छः घंटे से अधिक नहीं सोना चाहिए और न ही अनिद्रा का रोगी जो रात में सो ही न पता हो सफलता पूर्वेक योग कर सकता है, क्योंकि शरीर को स्वस्थ रखना अति आवश्यक है किसी भी योग पद्धति को करने हेतु उन्होंने चार न्यूनतम निषेध बताये हैं- 1. अवैध स्त्री संग नहीं, 2. नशा नहीं, 3. मांस भक्षण नहीं तथा 4. जुआ नहीं । इस युग में इन क्रियाओं से कौन बच सकता है? गीता के छठे अध्याय में श्री कृष्ण कहते हैं "योगी को चाहिए कि वह सदैव अपने शरीर, मन तथा आत्मा को परमेश्वर में लगाये, एकांत स्थान में रहे और बड़ी सावधानी के साथ अपने मन को वश में करे । उसे समस्त आकांक्षाओं तथा संग्रह भाव की इक्षाओं से मुक्त होना चाहिये ।" इस प्रकार हम समझ सकते हैं कि योगी का यह कर्त्तव्य है कि वह सदैव अकेला रहे । ध्यान पद्धति में परमात्मा पर मन केन्द्रित करना एकांत स्थान के अतिरिक्त संभव नहीं है । भारत में अभी भी कुछ योगी ऐसे हैं जो एकांत में रहते हैं, किन्तु दुर्लभ अवसरों पर वे जनसामान्य के मध्य उपस्थित होते हैं ।

एकांत स्थान में रहने के साथ-साथ, योगी को इक्षाओं से भी मुक्त होना चाहिए । वह समाज से पूर्णतः दूर जंगलो, वनों या पहाड़ों में अकेले रहता है । वह स्वयं को अकेला नहीं समझता क्यों कि परमात्मा सदैव उसके साथ होते हैं । कलयुग में एकांत में रहना, इच्छा रहित होना तथा संपत्ति रहित होना असंभव है । ध्यान योग करने की पद्धति बताते हुए कृष्ण अर्जुन से छठे अध्याय में कहते हैं "योगाभ्यास के लिए एकांत स्थान में जा कर भूमि पर कुश बिछ दें और फिर उसे मृग छाला से ढकें तथा ऊपर से मुलायम वस्त्र बिछा दें । आसन न तो बहुत उंचा हो, न बहुत नीचा । यह पवित्र स्थान में स्थित हो । योगी को चाहिए कि इस पर दृढ़ता पूर्वक बैठ जाये, और मन, इन्द्रियों तथा कर्मों को वश में करते हुए तथा मन को एक बिंदु पर स्थिर करके ह्रदय को शुद्ध करने के लिए योगाभ्यास करें ।" सामान्यतया योगी-जन बाघ की खाल या मृग छाल पर बैठते हैं जिससे जमीन में रेंगने वाले जीव जंतु ध्यान भंग ना कर सकें । संसार में प्रत्येक वस्तु का कोई न कोई उपयोग है । एकांत वातावरण में बैठ कर योगी मन और आत्मा को शुद्ध करना प्रारम्भ करता है । योगी को यह नही सोचना चाहिए, "अब मैं कुछ आश्चर्यजनक शक्तियों को प्राप्त करने का प्रयास करूँगा" कभी कभी योगियों को कुछ शक्तियां प्राप्त हो जाती हैं, परन्तु यह योग का उद्देश्य नहीं है तथा वास्तविक योगी-गण उनका प्रदर्शन नहीं करते । वास्तविक योगी सोचते हैं, "अभी मैं इस भौतिक वातावरण में दूषित हूँ अतः मुझे स्वयं को शुद्ध करना चाहिए ।"

इस प्रकार हम देख सकते हैं कि मन तथा शरीर को वश में करना सरल नहीं है किन्तु यदि हम ईश्वर में रत रहें तो इन सारे नियमों का अनुसरण सरलता से हो सकता है । हमारे पास भौतिक शरीर है तथा जब तक यह हमारे पास है, अनेक इच्छाएँ रहेंगी इसे बनाये रखने हेतु हमें भोजन करना होगा, और विश्राम हेतु सोना होगा । हम इन क्रियाओं को नकारने की आशा नहीं कर सकते, किन्तु वैदिक साहित्य इनकी नियमितता हेतु निर्देश अवश्य देता है यदि हम योग पद्धति में सफलता की आशा करते हैं तो हमें अपनी अनियंत्रित इन्द्रियों द्वारा स्वयं को गिरने से रोकना होगा श्री कृष्ण परामर्श देते हैं कि मन को नियमितता द्वारा वश में किया जा सकता है इसके लिए ईश्वर से सम्बंधित किसी क्रिया में सदैव लगे रहना ही वास्तविक समाधि है । जब व्यक्ति समाधि में हो तो वह खाना, काम करना, सोना या किसी भी प्रकार का आनंद लेना बंद न कर दे बल्कि, समाधि कि परिभाषा यह है कि ईश्वर के चिंतन में मग्न रहते हुए नियमित क्रियाएँ करते रहा जाए ।

मानव जीवन भी एक प्रकार का कुरुक्षेत्र है जिसमें प्रत्येक मनुष्य धर्म एवं अधर्म, कर्त्तव्य एवं अकर्तव्य के बीच उलझा हुआ है गीता उस मनुष्य को जो ह्रदय से इसका अध्ययन करता है, इस जीवन रूपी कुरुक्षेत्र में धर्म के पक्ष में विजय दिलाने तथा कर्त्तव्य करने व अकर्तव्य का त्याग करने के लिए अभिप्रेरित करती है । भगवद्गीता मनोवैज्ञानिक रूप से हमें अपना कर्म करने के लिए प्रेरित करती है और कर्त्तव्य तथा अकर्तव्य में अंतर बता कर हमारा मार्गदर्शन करती है । कुरुक्षेत्र की युद्ध भूमि में ऐसी परिस्थितियां उत्पन्न हो गयी थीं कि जिसमें फंस कर अर्जुन मोहासक्त हो गए थे, कृष्ण उनके सहज स्वभाव के अनुरूप उन्हें कर्म करने के लिए प्रेरित करते हैं इस प्रकार गीता इस बात पर बल देती है कि ज्ञान प्रदान करने से पूर्व अभिप्रेरित करना अति आवश्यक है ।

इस प्रकार श्री कृष्ण एक गुरु की भूमिका निभाते हुए एक मनोविज्ञानी के रूप में अपने शिष्य अर्जुन को अभिप्रेरित कर युद्ध करने के लिए तैयार करते हैं जैसा कि अट्ठारहवें अध्याय में अर्जुन श्री कृष्ण से कहते हैं, "हे कृष्ण अब मेरा मोह दूर हो गया है । आपके अनुग्रह से मेरी स्मरण शक्ति वापस मिल गयी । अब मैं संशय रहित और दृढ़ हूँ तथा आपके आदेशानुसार कर्म करने के लिए उदयत हूँ ।" श्री कृष्ण द्वारा दिया गया गीतोपदेश पलायनवादी अर्जुन को अपना स्वाभाविक कर्म करने के लिए प्रेरित करता है जिसके परिणामस्वरूप अंत में अर्जुन स्वयं श्री कृष्ण से कहते हैं कि अब मैं आपके अनुसार कार्य करने के लिए तैयार हूँ ।

जिस प्रकार कृष्ण अपने योग दर्शन का प्रयोग कर के अर्जुन को कर्म पथ पर अग्रसर करते हैं उसी प्रकार वर्तमान युग में भी व्यक्ति संयमित जीवन जीते हुए अपने शरीर तथा मन पर नियंत्रण रख कर एक योगी की भांति दृढ़ संकल्प कर के अपने कर्तव्यों एवं उत्तरदायित्वों का समुचित रूप से निर्वहन कर सकता है ।

सन्दर्भ ग्रन्थ:

1. भावे, विनोबा: गीता प्रवचन, सर्वसेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी, 1995.
2. श्रीवास्तव, डा० डी० एन० तथा वर्मा, डा० प्रीती: आधुनिक सामान्य मनोविज्ञान, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा 2009.
3. चतुर्वेदी, खेमचंद्र: शाश्वत जीवन की व्याख्या गीता, तुलसी मानस संस्थान, जयपुर 2006.
4. शर्मा, एस० एन०: श्रीमद्भगवद्गीता के मनोसामाजिक एवं शैक्षिक आयाम, भार्गव बुक हाउस, आगरा 2004.
5. गुप्ता, डा० बी० डी०: श्रीमद्भगवद्गीता का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण, भार्गव बुक हाउस, संवत 2058.
6. भक्तिवेदन, ए० सी० स्वामी प्रभुपाद: श्रीमद्भगवद्गीता, भक्तिवेदांत बुक ट्रस्ट, मुंबई 1990.
7. आचार्य रजनीश: गीता दर्शन, डायमंड बुक डिपो, दिल्ली, 1980
8. https://books.google.co.in/books?id=cAdGmEJSDGUC&printsec=frontcover - v=onepage&q&f=false